ISSN: Under Process| Vol. 1, Issue. 1| September 2021|Frequency: Biannual

अभिनवधारा
ABHINAVDHARA
International Journal of Innovation in Indic Studies
www.ijiis-org.com

ऐतरेय ब्राह्मण में प्रतिपादित आचार - दर्शन में वाणी की महत्ता

Supriya Sanju
Assistant professor
Amity Centre for Sanskrit and Indic Studies, AUH

Received: 15/08/2021 | Accepted: 16/08/2021 | Published: 07/09/2021

सारांश

ब्राह्मण ग्रंथों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि ब्राह्मण ग्रंथों में आचार - दर्शन पर अत्यंत ही सूक्ष्मता से विचार किया गया है , जो जीवन को आनंदमय और उन्नति की ओर अग्रसर करने में सक्षम है। मनुष्य को सदा सत्य बोलना चाहिए इस विषय पर विशेष रूप से बल दिया गया है। श्रद्धा , विश्वास , तप इत्यादि तथ्यों पर अनेकबार चिंतन से हमें यह अनुभव होता है कि ब्राह्मण ग्रंथों के काल में लोगों की आकांक्षा उत्कृष्ट और शुभ जीवन जीने की रही होगी। तभी तो ब्राह्मण साहित्य में एक नहीं अनेक बार प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अभ्युदय हेतु की कामना की गई है। परिणामतः ब्राह्मण ग्रंथों का दृष्टिकोण उच्च से उच्चतर और उससे भी उच्चतम जीवन की ओर अग्रसर दिखलाई देता है।

संकेत शब्द - ब्राह्मण ग्रंथ , आचार मीमांसा, वाणी ,

भूमिका

यज्ञों एवं कर्मकाण्डों के विधान एवं इनकी क्रियाओं को भली-भांति समझने हेतु हमारे विद्वान ऋषियों ने ब्राह्मण ग्रंथ की रचना की । यहाँ पर 'ब्रह्म' का शाब्दिक अर्थ हैं- यज्ञ अर्थात् यज्ञ के विषयों का अच्छी प्रकार से प्रतिपादन करने वाले ग्रंथ ही 'ब्राह्मण ग्रंथ' कहे गये। ब्राह्मण ग्रन्थों में सर्वथा यज्ञों की वैज्ञानिक, आधिभौतिक तथा आध्यात्मिक मीमांसा प्रस्तुत की गयी है। ब्राह्मण ग्रंथों की रचना शैली अभिकांशतः गद्य हैं। इनमें उत्तरकालीन समाज तथा संस्कृति के सम्बन्ध का ज्ञान प्राप्त होता है। प्रत्येक वेद (संहिता) के अपने-अपने ब्राह्मण होते हैं। ब्राह्मण ग्रंथों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि ब्राह्मण ग्रंथों में आचार - दर्शन पर अत्यंत ही सूक्ष्मता से विचार किया गया है , जो जीवन को आनंदमय और उन्नति की ओर अग्रसर करने में सक्षम है। मनुष्य को सदा सत्य बोलना चाहिए इस विषय पर विशेष रूप से बल दिया गया है। श्रद्धा , विश्वास , तप इत्यादि

तथ्यों पर अनेकबार चिंतन से हमें यह अनुभव होता है कि ब्राह्मण ग्रंथों के काल में लोगों की आकांक्षा उत्कृष्ट और शुभ जीवन जीने की रही होगी। तभी तो ब्राह्मण साहित्य में एक नहीं अनेक बार प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अभ्युदय हेतु कामना की गई है। परिणामतः ब्राह्मण ग्रंथों का दृष्टिकोण उच्च से उच्चतर और उससे भी उच्चतम जीवन की ओर अग्रसर दिखलाई देता है।

विषय वस्तु

ऐतरेय ब्राह्मण में नैतिक मूल्यों और उदात्त आचार-व्यवहार के सिद्धान्तों पर विशेष बल दिया गया है। प्रथम अध्याय के षष्ठ खण्ड में कहा गया है कि दीक्षित यजमान को सत्य ही बोलना चाहिए, इसी प्रकार के अन्य वचन हैं- जो अहंकार से युक्त होकर बोली जाती है, वह राक्षसी वाणी है।

शुन:शेप से सम्बद्ध आख्यान के प्रसंग में कर्मनिष्ठ जीवन और पुरुषार्थ-साधना का महत्त्व बड़े ही काव्यात्मक ढंग से बतलाया गया है। कहा गया है कि बिना थके हुए श्री नहीं मिलती; जो विचरता है, उसके पैर पुष्पयुक्त होते हैं, उसकी आत्मा फल को उगाती और काटती है। भ्रमण के श्रम से उसकी समस्त पापराशि नष्ट हो जाती है। कलि युग का अर्थ है मनुष्य की सुप्तावस्था, जब वह जंभाई लेता है तब द्वापर की स्थिति में होता है, खड़े होने पर त्रेता और कर्मरत होने पर सत युग की अवस्था में आ जाता है। चलते हुए ही मनुष्य फल प्राप्त करता है। सूर्य के श्रम को देखो, जो चलते हुए कभी आलस्य नहीं करता-

कलि: सयानो भवति संजिहानस्तु द्वापर:।
उत्तिष्ठंस्त्रेता भवति कृतं सम्पद्यते चरंश्चरैवेति॥
चरन्वै मधु विन्दति चरन्स्वादुमुदुम्बरम्।
सूर्यस्य पश्य श्रेमाणं यो न तन्द्रयते चरंश्चरैवेति॥ ऐतरेय ब्राह्मण 33.1

मुख्य विषय

ऐतरेय ब्राह्मण में प्रतिपादित आचार - दर्शन में वाणी की महत्ता - इस विषय पर विचार करने से पूर्व ब्राह्मण ग्रंथ एवं ऐतरेय ब्राह्मण के विषय में किञ्चित संक्षेप में वर्णन कर रही हूँ-

ब्राह्मण ग्रन्थ –

विद्यन्ते ज्ञायन्ते लभ्यन्ते वा एभिर्धर्मादिपुरुषार्था इति वेदाः

अर्थात धर्म , अर्थ , काम और मोक्ष - इन पुरुषार्थ को जिसके द्वारा प्राप्त किया जाय या जाना जाय उसे वेद कहते हैं। आचार्य बौधायन ने वेद का स्वरुप निर्धारित करते हुए कहा है कि मन्त्र और ब्राह्मण दोनों का सामुहिक नाम वेद है। ततपश्चात कालान्तर में सूत्रकारों एवं परवर्ती भाष्यकारों द्वारा ब्राह्मण ग्रंथों को वेद का अपरिहार्य अंग मान लिया गया। इसका कारण यह था कि ब्राह्मण ग्रंथों में यज्ञ को भी एक विद्या के रूप में स्वीकार किया जाता था।अतः इनमें स्थान - स्थान पर यज्ञ - विधि के ज्ञान को स्वर्ग प्राप्ति या सुख प्राप्ति का साधान माना गया है।

वेद मन्त्रों की सुगम व्याख्या , यज्ञीय - विधि -विधानों के अतिसूक्ष्म निरूपण तथा समकालीन वैचारिक आंदोलन को दिशा प्रदान करने की भावना मुख्यतया ब्राह्मण ग्रंथों की पृष्टभूमि में निहित है , अतः इन ग्रंथों को वेद की परिधि से बाहर नहीं किया जा सकता है।

ऐतरेय ब्राह्मण' -

ऐतरेय ब्राह्मण' ऋग्वेद के शाकल शाखा के सम्बद्व है। इसमें 8 खण्ड, 40 अध्याय तथा 285 कण्डिकाएं हैं। इसकी रचना 'महिदास ऐतरेय' द्वारा की गई थी, जिस पर सायणाचार्य ने अपना भाष्य लिखा है।

इस ग्रन्थ के ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि पर प्रकाश डालें तो ज्ञात होता है कि ऐतरेय ब्राह्मण में भारत के मध्य भाग अर्थात मध्य प्रदेश का विशेष आदर पूर्वक उल्लेख किया गया है- **'ध्रुवायां मध्यमायां प्रतिष्ठायां दिशि'।** पं. सत्यव्रत शास्त्री के अनुसार इस मध्य प्रदेश में कुरु, पंचाल, शिवि और सौवीर संज्ञक प्रदेश सम्मिलित थे। महिदास ऐतरेय का अपना निवास-स्थान भी इरावती नदी के समीपस्थ किसी जनपद में था। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार उस समय भारत के पूर्व में विदेह आदि जातियों का राज्य था। दक्षिण में भोजराज्य, पश्चिम में नीच्य और अपाच्य का राज्य, उत्तर में उत्तरकुरुओं और उत्तर मद्र का राज्य तथा मध्य भाग में कुरु-पंचाल राज्य थे।

ऐतरेय ब्राह्मण के ऐन्द्र-महाभिषेक के प्रसंग में, अन्तिम तीन अध्यायों में जिन ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम आये हैं, वे हैं- परीक्षित-पुत्र जनमेजय, मनु-पुत्र शर्यात, उग्रसेन-पुत्र युधां श्रौष्टि, अविक्षित-पुत्र मरूत्तम, सुदास पैजवन, शतानीक और दुष्यन्त-पुत्र भरत। भरत की विशेष प्रशंसा करते हुए कहा गया है कि उसके पराक्रम की समानता कोई भी नहीं कर पाया -

महाकर्म भरतस्य न पूर्वे नापरे जना:।
दिवं मर्त्य इव हस्ताभ्यां नोदापु: पञ्च मानवा:॥

पुरोहित का विशेष महत्त्व निरूपित करते हुए ऐतरेय ब्राह्मण के अन्तिम अध्याय मेंबताया गया है कि राजा को पुरोहित की नियुक्ति अवश्य करनी चाहिए, क्योंकि वे आहवनीयाग्नितुल्य होतें है। पुरोहित वस्तुत: प्रजा के प्रतिनिधि है, जो राजा से प्रतिज्ञा करतें है कि राजा अपनी प्रजा से कभी द्रोह नहीं करेगा।

ऐतरेय ब्राह्मण में 33 प्रकार के देवताओं की चर्चा की गए है -**'त्रयस्त्रिंशद् वै देवा:**'। इन देवताओं में अग्नि को प्रथम देवता , और विष्णु परम देवता के रूप में बताया गया है। और इन्हीं के मध्य शेष देवताओं का समावेश हो जाता है- यहीं से महत्ता-प्राप्त विष्णु आगे पुराणों में सर्वाधिक वेशिष्ट्यसम्पन्न देवता बन गए। देवों के मध्य इन्द्र अत्यधिक ओजस्वी, बलशाली और दूर तक पार कराने वाले देवता हैं।
देवताओं के सामान्य गुण बताते हुए कहा गया है -

१. देवता सत्य से युक्त होते हैं,
२. वे परोक्षप्रिय होते हैं,
३. वे एक दूसरे के घर में रहते और
४. वे मर्त्यों को अमरता प्रदान करते हैं।

ऐतरेय ब्राह्मण में विद्यमान शुनः शेप आख्यान जिसे हरिश्चन्द्रोपाख्यान भी कहा जाता है, समाजशास्त्र, नेतृत्वशास्त्र एवं धर्मशास्त्र की दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण है। यह ग्रन्थ के 33वें अध्याय में समाविष्ट है। प्राचीन काल में राज्याभिषेक के समय यह राजा को सुनाया जाता था।

ऐतरेय ब्राह्मण में आचार - दर्शन –

ऐतरेय ब्राह्मण में नैतिक मूल्यों और उदात्त आचार-व्यवहार के सिद्धान्तों पर विशेष बल दिया गया है। प्रथम अध्याय के षष्ठ खण्ड में कहा गया है कि दीक्षित यजमान को सत्य ही बोलना चाहिए। इसी प्रकार के अन्य वचन हैं- जो अहंकार से युक्त होकर बोली जाती है, वह राक्षसी वाणी है।

शुन:शेप से सम्बद्ध आख्यान के प्रसंग में कर्मनिष्ठ जीवन और पुरुषार्थ-साधना का महत्त्व बड़े ही काव्यात्मक ढंग से बतलाया गया है।

चरैवेति - चरैवेति के द्वारा सदा कर्म करते रहने की शिक्षा ऐतरेय ब्राह्मण की सबसे प्रमुख शिक्षा है। सदा कर्म करते रहो , सदा उद्योगशील रहो , निरंतर कर्मठ बने रहो, क्योकि कर्मनिष्ठ जीवन ही जीवन है - **इन्द्र इच्चरतः सखा** अर्थात ईश्वर भी उन्हीं की सहायता करते हैं जो कर्म करता है, जो कर्मठ है। **नानाश्रान्ताय श्रीरस्ति** - अथक परिश्रम के बिना श्री की प्राप्ति नहीं होती। सूर्य का उद्धरण देते हुए बताया गया है कि सूर्य निरन्तर चलता है ,अतः उसकी कान्ति अक्षय है। जो विचरता है, उसके पैर पुष्पयुक्त होते हैं, उसकी आत्मा फल को उगाती और काटती है। भ्रमण के श्रम से उसकी समस्त पापराशि नष्ट हो जाती है। कर्महीन व्यक्ति का भाग्य भी बैठ जाता है, सोते हुए का सो जाता है और चलते हुए का भाग्योदय होता है। कलि युग का अर्थ है मनुष्य की सुप्तावस्था, जब वह जंभाई लेता है तब द्वापर की स्थिति में होता है, खड़े होने पर त्रेता और कर्मरत होने पर सत युग की अवस्था में आ जाता है। चलते हुए ही मनुष्य फल प्राप्त करता है। सूर्य के श्रम को देखो, जो चलते हुए कभी आलस्य नहीं करता-

कलि: सयानो भवति संजिहानस्तु द्वापर:।
उत्तिष्ठंस्त्रेता भवति कृतं सम्पद्यते चरंश्चरैवेति॥
चरन्वै मधु विन्दति चरन्स्वादुमुदुम्बरम्।
सूर्यस्य पश्य श्रेमाणं यो न तन्द्रयते चरंश्चरैवेति॥

सत्य का महत्त्व –

सत्य का प्रत्येक मनुष्य के जीवन में अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है। ऐतरेय ब्राह्मण में देवताओं को सत्य से युक्त बताया गया है।

प्रथम अध्याय के षष्ट खंड में यह भी बताया गया है कि दीक्षित यजमान को सत्य ही बोलना चाहिए -**ऋतं वाव दीक्षा तस्माद दीक्षितेन सत्यमेव वदितव्यम।**

इसीप्रकार ऐतरेय ब्राह्मण में अनेक वचन सत्य के महत्त्व को स्थापित करते है -

यथा - **विदुषा सत्यमेव वदितव्यम।**

अवत्येन सत्यमानृतं हिनस्ति।

ऐतरेय ब्राह्मण में मनुष्यों के लिए निर्देश है कि उन्हें विचक्षण से युक्त वाक्य का कथन करना चाहिए। यहाँ चक्षु इन्द्रिय को विचक्षण कहा गया है ,क्योकि मनुष्य इसी इन्द्रिय के द्वारा सत्य तत्त्व को देखता है। प्रत्यक्ष प्रमाण का साधन चक्षु

इन्द्रिय होता है क्योकि यह सभी मनुष्यों के बीच निहित सत्य हैजीवन में सत्य एवं असत्य दोनों का प्रभाव मनुष्य के आचरण पर भी दिखलाई देता है इसलिए ऐतरेय ब्राह्मण में सत्य पुरुष उसे माना गया है जो अग्निहोत्र का अनुष्ठान करता है। असत्य पुरुष कौन है - इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा गया है - जो पुरुष देवताओं की पूजा न करे , जो पितरों की पूजा न करे और जो अथिति रूप में मनुष्य की पूजा न करे।ऐतरेय ब्राह्मण में आचार -व्यवहार में मनुष्य की वाणी को सर्वाधिक महत्त्व दिया गया है और वाणी के कई प्रकार बताए गए हैं। ग्रन्थ के अनुसार व्यक्ति की पहचान वाणी से होती है क्योंकि वह प्राणिमात्र की अधिष्ठात्री है। जीवन में प्रगति के पथ पर आगे बढ़ते हुए व्यक्ति के लिए वाणी परम उपादेय सिद्ध होती है।

राक्षसी वाणी –

ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार धन या विद्या के अहंकार में तिरस्कार हेतु जो वाणी बोली जाती है, अथवा उन्मत होकर बुद्धि से रहित जो वाणी बोली जाती है वह राक्षसी वाणी है। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार देवविरोधिनी वाणी असुरों द्वारा प्रयोग की जाती है।

सुतर्मा नाव रूप वाणी

ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार वाणी रूपी नाव के द्वारा पापों को पार किया जा सकता है। जिस वाकरूपी नावों से समस्त पापों को हम पार कर लें वैसी अच्छी प्रकार से तैरने योग्य वाकरूपी नाव पर हम चढ़ें। वाणी रूपी उस नाव पर चढ़ कर उस नाव से स्वर्ग को सम्यक रूप से पार किया जा सकता है।

मन और वाणी का परस्पर संबंध-

ऐतरेय ब्राह्मण में अनेक स्थान पर वाणी और मन का संबन्ध बतलाते हुए कहा गया है कि मैत्रावरुण यज्ञ पुरुष का मन है और होता यज्ञ पुरुष की वाणी। वस्तुतः लोक में मन से ही प्रेरित होकर वाणी शब्द का उच्चारण करती है, और उस मन से प्रेरित वाणी के द्वारा पुरुष देवताओं के लिए हव्य का सम्पादन करता है।

इनके अतिरिक्त ऐतरेय ब्राह्मण में वाणी के विषय में कहा गया है कि पुरुष कोअपनी वाणी पर संयम रखना चाहिए , एक कथा के माध्यम से इस बात की पुष्टि करते हुए ग्रन्थ में कहा गया है कि - सोम खरीदने के पश्चात वाग्देवी गंधर्वों के पास रहती है अतः सोम खरीदने के बाद और अग्नि - प्रणयन के पहले मन्त्र मन में बोलना चाहिए क्योकि अग्नि-प्रणयन अर्थात अग्नि को उत्तरवेदी में ले जाने के बाद वह पुनः वापस आ जाती है। यहाँ यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है की वाणी पर नियंत्रण आवश्यक है।

एक अन्य स्थल पर वर्णन है कि संसार की उत्पत्ति के प्रारंभिक काल में प्रजापति ने प्रजा की उत्पत्ति की कामना हेतु तपस्या की , उस तप में उन्होंने अपनी वाणी को संयमित किया और एक वर्ष के पश्चात बारह बार वाणी का उच्चारण किया। वह उच्चारित वाणी ही बारह पदों से युक्त होकर निविद बनी। इस निविद को प्रजापति ने उच्चरित किया और उसी निविद की सामर्थ्य से भूतों की उत्पत्ति हुई।

इसके अतिरिक्त मित्रता एवं स्वामिभक्ति में बोली गई वाणी , परस्पर द्रोह की समाप्ति हेतु बोली गई वाणी , सहिष्णुता की प्राप्ति एवं उग्रता के परिहार की भावना के लिए बोली गई वाणी ,पवित्रता तेज एवं ब्रह्मवर्चस के लिए बोली गई पवित्र वाणी के महत्त्व पर भी ऐतरेय ब्राह्मण में बल दिया गया है।

निष्कर्ष

ब्राह्मण ग्रांथों में यत्र - तत्र पाप कर्मों को नष्ट करने हेतु अनेक रोचक तथ्य प्राप्त होतें है साथ ही मनुष्य के अन्तस् में उत्साह एवं जीवन के प्रति उमंग संचारित करने वाले विविध संदर्भ भी प्राप्त होतें हैं। कहीं पर वैयक्तिक आचार की दृष्टि से कर्म , पुरुषार्थ , पवित्रता , सहिष्णुता इत्यादि को महत्त्व दिया गया है हो कहीं पारिवारिक , सामाजिक एवं राजनितिक दृष्टि से श्रेष्ठ आचार का प्रतिपादन किया गया है। अतः यह कहा जा सकता है कि आचार - व्यवहार की दृष्टि से ब्राह्मण ग्रंथों की उपादेयता असंदिग्ध है।

ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार हमारी वाणी ही हमारी शिक्षा-दीक्षा, कुल की परंपरा और मर्यादा का परिचय देती है। शिष्टता और शालीनता सद्व्यवहार के प्राण है। व्यवहार में इन गुणों का समावेश होने पर ही पता चलता है कि व्यक्ति कितना सुसंस्कारी है, शिष्टता का अर्थ है- प्रत्येक के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार और शालीनता अर्थात् प्रत्येक के प्रति स्नेह और आत्मीयता की उच्चस्तरीय अभिव्यक्ति।

ऐतरेय ब्राह्मण में आचार - दर्शन को अत्यंत महत्व दिया गया है। सत्यनिष्ठ वाणी के साथ साथ कर्मठ जीवन शैली पर भी प्रकाश डाला गया है। मनुष्य जीवन में पवित्र विचार और निर्मल जीवन का अत्यधिक महत्त्व है , अतः ब्राह्मण ग्रंथों में भी पवित्रता की भावना निहित है। शुचिता की भावना के द्वारा मनुष्य कल्याणकारी कर्मों में प्रवृत्त होकर संसार के समक्ष आदर्श रूप में उपस्थित होता है। उचित स्थल पर उचित वाणी का प्रयोग मनुष्य को समाज में सफल बनाता है। ऐतरेय ब्राह्मण में अतिथि देवो भवः की भावना भी सुदृढ़ रूप में परिलक्षित होती है। ऐतरेय ब्राह्मण में आतिथ्य - इष्टि का विधान है , जहाँ अतिथि - सत्कार को सबसे बड़े यज्ञ के रूप में माना गया है **- शिरो वा एतद यज्ञस्य यद आतिथ्यम। (ऐत ० -१. १७)**

सन्दर्भ ग्रन्थ-

- पाठक जमुना **ऐतरेय ब्राह्मण**, , प्रकाशक- चौखम्बा, प्रकाशन की तारीख - 1 जनवरी 2016.
- राधाकृष्णन सर्वपल्ली **भारतीय संस्कृति कुछ विचार**, प्रकाशक : राजपाल प्रकाशन, प्रकाशन वर्ष : 2005
- आद्यादत्त-ठाकुर **वेदोंमेंभारतीयसंस्कृति** प्रकाशक : हिंदीसमिति लखनऊ प्रकाशन वर्ष : 1967
- हरिदत्त वेदालंकार **भारतीय संस्कृति का संक्षिप्त इतिहास** प्रकाशक : एम. एन. पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर प्रकाशन वर्ष : 2007